नवम्बर २०१७

कीमत ₹ १२/-

दादा भगवान परिवार का

आक्रम एक्सप्रेस

कम्पैरिसन के दु:ख

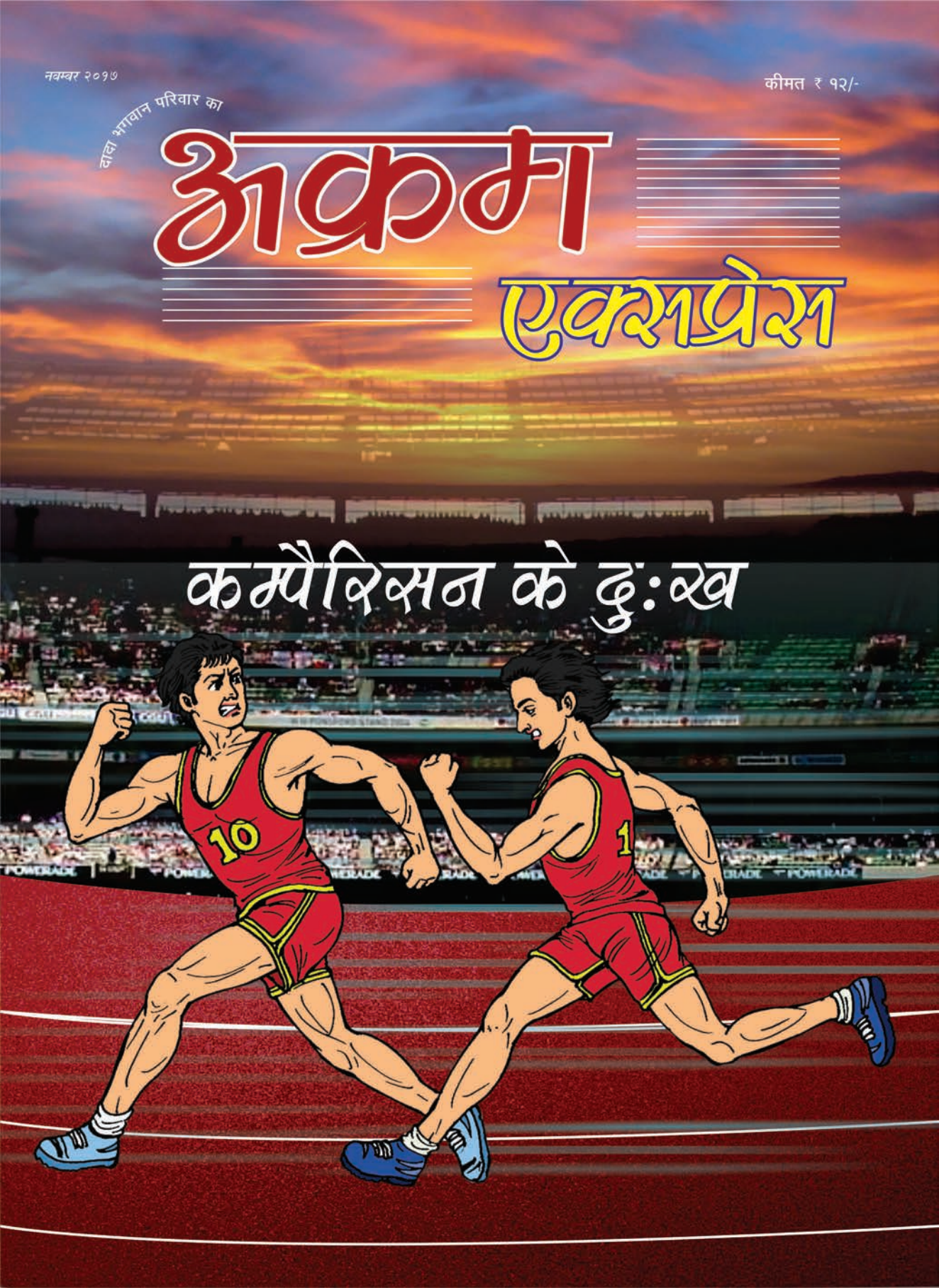

कम्पैरिसन के दुःख

संपादकीय

बालमित्रों,

वास्तव में हम इतने भाग्यशाली बच्चे हैं कि दुःख क्या चीज़ है हमने उसे देखा ही नहीं है। फिर भी क्यों हम किसी न किसी वजह से रोते ही रहते हैं? मानो कितने दुःखों के पहाड़ टूट पड़े हों!

फिर एक दिन मैंने पता लगाया कि मुझे क्या प्रॉब्लेम है। चेक करने पर पता चला कि मैं इतना लकी हूँ कि मेरे पास सबकुछ है। लेकिन जब मैं उसका औरों के साथ कम्पैरिसन करता हूँ तब मुझे दुःख शुरू हो जाता है।

अतः मेरा सब से बड़ा दुःख कम्पैरिसन का है। फिर मैंने तय कर लिया कि इसमें से निकलना ही है। परम पूज्य दादाजी के द्वारा मुझे इसमें से निकलने की अद्भुत चाबियाँ मिली। जो मुझे हमेशा आनंद में रहने के लिए उपयोगी साबित हुई।

तो आइए, आप भी यह समझ प्राप्त कीजिए और आनंद में रहिए।

–डिम्पल मेहता

संपादकः
डिम्पल मेहता
वर्ष : ५ अंकः ८
अखंड क्रमांकः ५६
नवम्बर २०१७

संपर्कसूत्र
बालविज्ञान विभाग
त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सिटी,
अहमदाबाद - कलोल हाइवे,
मु.पो. - अडालज,
जिला . गांधीनगर - ३८२४२१, गुजरात
फोन : (०७९) ३९८३०१००
email:akramexpress@dadabhagwan.org
Website: kids.dadabhagwan.org

Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

Printed at
Amba Offset
Basement, Parshvanath Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj-382421.
Dist-Gandhinagar.

अक्रम एक्सप्रेस

वार्षिक सदस्यता(हिन्दी)
भारत :१२५ रुपये
यू.एस.ए. :१५ डॉलर
यू.के. :१२ पाउन्ड
पाँच वर्ष
भारत : ८०० रुपये
यू.एस.ए. : ६० डॉलर
यू.के. : ५० पाउन्ड
D.D/ M.O 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम पर भेजें।

नीरू माँ : बचपन से ही सभी जगह यह सिखाया जाता है कि आगे बढ़ो, महत्वकांक्षी बनो। इसमें कोई हर्ज़ नहीं है। लेकिन आगे बढ़ते-बढ़ते हम, जो अन्य लोग आगे बढ़ रहे हैं उनके साथ तुलना करने लग जाते हैं कि मेरे पास कम है, उसके पास ज्यादा है। तो मैं कैसे ज्यादा प्राप्त कर लूँ? ताकि उससे आगे निकल जाऊँ। और अंत में जब उससे आगे नहीं जा पाते तो उसका कैसे कम हो और मेरा बढ़ जाए ताकि मैं उससे बड़ा दिख सकूँ।

हर बात में बुद्धि की खोजबीन चालू ही रहती है कि मुझे सब से ज्यादा मिले। या किसी को नहीं मिले या तो सभी को बराबर मिले। लेकिन किसी और को मुझ से ज्यादा मिल जाए और मुझे कम मिले यह तो ज़रा भी नहीं चलेगा। पहले कम्पैरिसन शुरू होता है, फिर स्पर्धा शुरू हो जाती है, फिर जेलसी शुरू होती है, फिर नेगेटिविटी आती है, फिर दोष शुरू होते हैं और फिर वैर भाव तक चले जाते हैं।

ये सभी नासमझी के दुःख हैं। मुझे जो मिला वह मेरे पुण्य का मिला है, मेरे कम्पेटिटर को ज्यादा मिला, वह उसके पुण्य से मिला है। स्कूल-कोलेज में पढ़ते समय यदि हमारे फ्रेन्ड के ज्यादा मार्क्स आ गए तो जल-जलकर खाक हो जाते हैं। जो मिला है उसे नहीं भोग पाते, इसलिए यह जो दुःख हैं, वह हमारी नासमझी के हैं।

तीर्थंकरों ने बहुत अच्छा रास्ता दिखाया है कि दुःख में से सुख कैसे प्राप्त करें। उदाहरण के तौर पर जैसे हमारी एक ऊँगली कट गई हो तो अज्ञानी, मेरी ऊँगली गई ऐसा सोचकर, भयंकर दुःख और डिप्रेशन में आ जाता है, पूरी ज़िंदगी पीडित रहता है कि मेरी ऊँगली गई, गई, गई। तीर्थंकर क्या सिखाते हैं कि भाई मेरी बीस ऊँगलियों में से उन्नीस तो बच गई। एक गई लेकिन उन्नीस तो बच गई। जो बच गया उसमें सुख मानते हैं, गया उसे याद भी नहीं करते। एक हाथ कट गया तो कहेंगे, दूसरा हाथ तो है। दो पैर तो हैं। दो हाथ कट गए तो कहेंगे पैर तो हैं। एक आँख गई तो कहेंगे कि दूसरी तो है, दो आँख गई तो कहेंगे, कान तो हैं। कान गए तो कहेंगे, अभी धड़ तो है। दो हाथ, दो पैर कट गए तो कहेंगे, दो आँख तो हैं, दुनियाँ तो मुझे दिखती है। सिर्फ एक धड़ होगा फिर भी कहेंगे कि अभी जीवित तो हूँ। धर्म करके पुण्य तो कमा सकूँगा। या मोक्ष तो जा सकूँगा। आत्मा प्राप्त कर सकूँगा। इस तरह जो बच गया उसका आनंद लेते हैं, गया उसका दुःख नहीं लगाते। वीतराग ऐसा सिखाते हैं। और वास्तव में वीतराग की यह बात सीख लेंगे तो एक दुःख भी स्पर्श करे ऐसा नहीं है। जो है उसे एक्सेप्ट करो। एक्सेप्ट कर लेंगे तो ज़रा भी भोगवटा नहीं आएगा।

ज्ञानी कहते हैं...

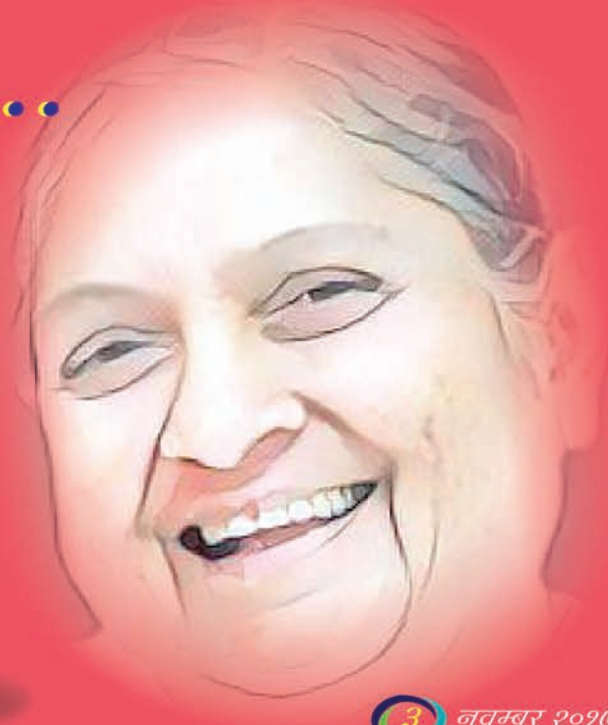

यह तो बड़ी ही बात है!

जब कम्पैरिसन होता है और भोगवटा आता है, तो यह हमारी बुद्धि का ही दुःख है।

हाईवे पर अपनी गाड़ी जा रही है और यदि कोई गाड़ी नज़दीक आ जाए तो हमें कम्पैरिसन होने लगता है कि मैं उससे आगे निकल जाऊँ। और यदि वह आगे चला गया तो हम भी ज़ोर लगाकर आगे जाने की कोशिश करते हैं। अब उस गाड़ी के आगे भी लाखों गाड़ियाँ गई हैं। किसके साथ कम्पैरिसन किया जाए... और हमारे पीछे भी लाखों गाड़ियाँ आ रही है, तो उनसे तो हम बहुत आगे ही हैं। लेकिन समान लेवल का व्यक्ति होने की वजह से कम्पैरिसन हो जाता है।

मोहन चाचा ने बंसी को अपनी शुभकामनाएँ देते हुए कहा, "मुबारक हो, बेटा बंसी। तूने अपने कुल और गाँव का नाम रोशन कर दिया। आज तक अपने गाँव में से किसी ने सरस्वती गुरुकुल में प्रवेश प्राप्त नहीं किया है।"

बंसी की खुशी का ठिकाना नहीं था। इतनी खुशी का अनुभव तो उसने पहले कभी नहीं किया था। अब तक के जीवन का उसका सब से बड़ा सपना साकार हो गया था। इस सपने को साकार करने के लिए उसने दिन-रात मेहनत की थी।

पूरी रात बंसी गुरुकुल की सुंदर कल्पनाएँ करता रहा। ठीक पाँच बजे उठकर तैयार हो गया।

माँ ने प्रेम से सिर पर हाथ फिराते हुए कहा, "बेटा, खूब मन लगाकर पढ़ाई करना। खुश रहना। और चिट्ठी लिखते रहना।"

माता-पिता के पैर छूकर बंसी ने आशीर्वाद लिया और गुरुकुल जाने के लिए रवाना हो गया।

सरस्वती गुरुकुल तो बंसी की कल्पना से भी ज्यादा सुंदर था। बरगद के पेड़, पक्षियों का मीठा

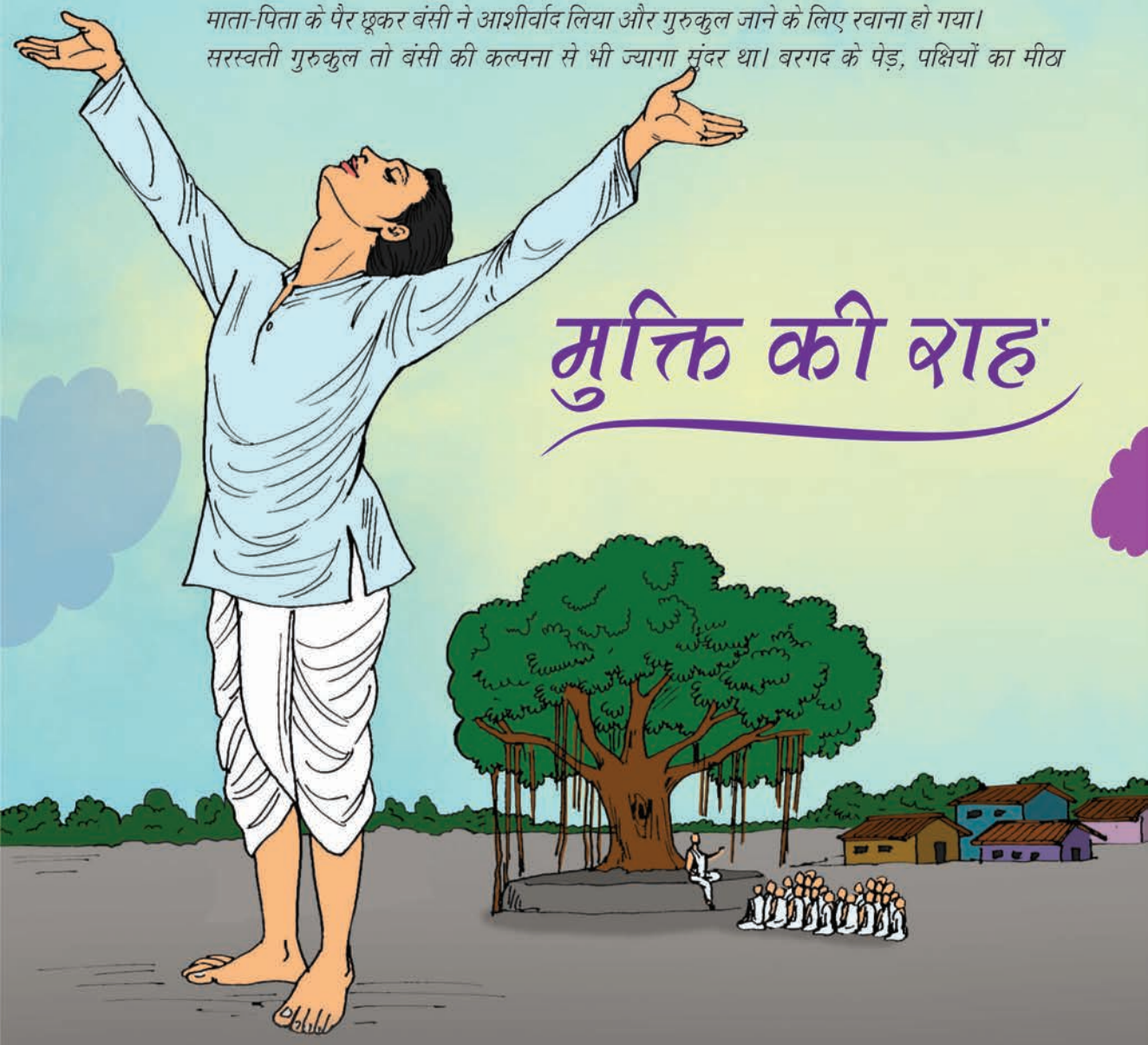

मुक्ति की राह

कलरव, ठंडी हवा और साफ़-सुथरा वातावरण देखकर वंसी ने एक निराली ठंडक महसूस की। गुरुकुल में सभी के चेहरे पर प्रसन्नता दिख रही थी।

विद्यासागर गुरु जी ने बहुत ही प्रेम से वंसी का अभिवादन किया, "आ बेटा, वंसी।"

वंसी के माता-पिता की कुशलता के बारे में पूछा। विद्यासागर जी ने सभी के साथ वंसी का परिचय करवाया।

वंसी गुरुकुल के अध्यापक और सहाध्यायियों से पहली ही बार मिल रहा था। लेकिन उनका प्रेम और हूँफ प्राप्त करके, वंसी को लगा कि जैसे सालों पुरानी पहचान हो। पहले दिन से ही वंसी सभी के साथ हिलमिल गया।

पढ़ाई शुरू हो गई। वंसी दिल लगाकर पढ़ाई करने लगा। उसकी धारण शक्ति और सूझबूझ से गुरुकुल के अध्यापक और विद्यासागर जी बहुत प्रसन्न थे। अपनी होशियारी की तारीफ सुनकर वंसी को अच्छा लगने लगा। और भी ज्यादा तारीफ सुनने के लिए वह ज़बरदस्त मेहनत करने लगा।

एक दिन, शास्त्रों की गुह्य बातें समझाते हुए, विद्यासागर जी अचानक रुक गए।

"सालों पहले जब शुभेंदु को यह बात समझाई थी, तब उसका प्रश्न सुनकर मैं चकित हो गया था", विद्यासागर जी ने शुभेंदु का प्रश्न बताकर अपने शिष्यों के साथ उस पर चर्चा की।

"शुभेंदु" का नाम विद्यासागर जी के शिष्यों के लिए कोई नया नहीं था। और वंसी ने भी पहली बार विद्यासागर जी से शुभेंदु की प्रशंसा नहीं सुनी थी। लेकिन आज उसे वह प्रशंसा अच्छी नहीं लग रही थी।

वंसी ने सोचा, "क्या मेरे जाने के बाद, गुरु जी मुझे भी इसी तरह याद रखेंगे? क्या दिल से मेरी भी ऐसी ही प्रशंसा करेंगे?"

बस, शुभेंदु के साथ अपनी कम्पैरिसन करते-करते कब वह कम्पैरिसन, कॉम्पीटिशन में बदल गई उसका उसे पता ही नहीं चला। विद्यासागर जी जब भी शुभेंदु की थोड़ी सी भी प्रशंसा करते, तब वंसी के दिल में जलन शुरू हो जाती। एक अनदेखे व्यक्ति के प्रति वंसी का ज़बरदस्त मुकाबला शुरू हो गया।

वंसी के मन में ऐसी धुन सवार हो गई कि किस तरह विद्यासागर जी के दिल में शुभेंदु से ऊँचा स्थान प्राप्त कर लूँ।

एक दिन बलदेव चाचा ने प्रेम से वंसी को एक व्यंजन परोसा। परोसते हुए, वे बोले, "यह तो मेरे शुभेंदु का सब से प्रिय व्यंजन है।" बस इतना सुनते ही वंसी खड़ा हो गया।

"माफ करना चाचा। आज भूख नहीं है।" शुभेंदु का नाम सुनते ही वंसी को चिढ़ लगने लगती। शुभेंदु के प्रति वंसी को छुपा द्वेष रहने लगा।

और इस तरह वंसी को पता ही नहीं चला कि द्वेष की वजह से उसकी आंतरिक शक्तियाँ कम हो रही है।

एक दिन वंसी की माँ का पत्र आया। किसी खास काम के लिए उसे वीरपुर बुलाया था। वह विद्यासागर जी से अनुमति माँगने गया।

"वीरपुर?" नाम सुनते ही विद्यासागर जी के चेहरे पर चमक आ गई, " हाँ, हाँ बेटा माता-पिता से मिलकर काम खत्म करके आ जाना। मेरा भी एक काम करोगे?"

बंसी ने तुरंत जवाब दिया, "गुरु जी, आप तो बस हुक्म कीजिए। मुझ से पूछने की क्या ज़रूरत है।"

गुरु जी बंसी को देखकर मुस्कराए।

लिफाफे में एक पत्र रखकर और उसे गोंद से चिपकाकर बंसी के हाथ में दिया। गुरु जी ने कहा, "वीरपुर में इस पते पर शुभेंदु रहता है। यह पत्र उस तक पहुँचा दोगे?"

शुभेंदु का नाम सुनते ही बंसी के दिल को धक्का लगा। शुभेंदु के प्रति बंसी का तिरस्कार इतना बढ़ गया था, कि अब उसके नाम से ही उसे डर लगने लगता।

बड़ी मुश्किल से बंसी ने आवाज़ में स्वस्थता रखते हुए कहा, "हाँ, हाँ। क्यों नहीं गुरु जी।"

पत्र लेकर वह अपने कमरे में गया। थोड़ी देर तक वह पत्र देखता रहा, "कल पहली बार मेरे प्रतिस्पर्धी से मिलूँगा। वह शेर है तो मैं सवाशेर हूँ। वह अपने आप को बड़ा पंडित समझता होगा। कल उसकी सारी पंडिताई निकाल दूँगा।" बंसी के मन में विचारों के घोड़े दौड़ने लगे।

अपने सब से अच्छे कपड़े पहनकर बंसी वीरपुर जाने के लिए निकल पड़ा।

गाँव वालों से पता पूछकर बंसी शुभेंदु के घर पहुँचा। कल्पनाओं से बनाई हुई उसकी सारी रचनाएँ भंग हो गई। बंसी ने सोचा था कि शुभेंदु बहुत समृद्ध होगा। लेकिन शुभेंदु का सादा घर देखकर तो बंसी के आश्चर्य का पार नहीं था।

वह सही पते पर ही पहुँचा है या नहीं, यह पता लगाकर उसने दरवाज़ा खटखटाया।

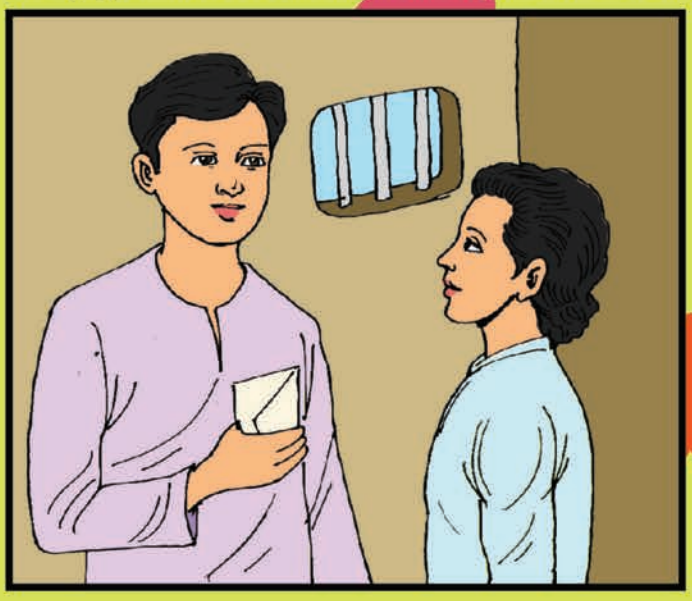

बंसी बोला, "नमस्ते, मेरा नाम बंसी है। मैं विद्यासागर जी का शिष्य हूँ। शुभेंदु भाई का काम था।"

"वीरपुर" का नाम सुनते ही विद्यासागर जी के चेहरे पर जैसी चमक आ गई थी वैसी ही चमक शुभेंदु के चेहरे पर अपने गुरु जी का नाम सुनकर आ गई।

बड़े ही प्रेम से शुभेंदु ने बंसी का स्वागत किया। शुभेंदु का प्रभावशाली व्यक्तित्व देखकर बंसी ने उसे हराने के लिए जो पेंतरे रचे थे, वे सब चकनाचूर हो गए।

बंसी ने विद्यासागर जी का पत्र शुभेंदु को दिया। शुभेंदु ने पत्र सँभालकर अपने पास रख दिया। थोड़ी देर की शांति के बाद, हिम्मत इकट्ठी करके बंसी ने शुंभेंदु से पूछा, "आपसे एक प्रश्न पूछूँ?"

"हाँ, हाँ क्यों नहीं?"

"सरस्वती गुरुकुल में आज भी सभी के दिल में आपका स्थान है। आपकी विद्या की आज भी वहाँ चर्चाएँ होती हैं। आप इतने बड़े विद्वान हैं। यदि आप चाहते तो इस विद्या के आधार से बहुत समृध्दिवान हो सकते थे। तो फिर..." बंसी अपना वाक्य भी पूरा नहीं कर पाया लेकिन शुभेंदु बंसी का आशय समझ गया।

"बंसी तेरी उलझन देखकर मुझे एक बात याद आ गई। एक दिन एक मुसाफिर सूफी संत से मिलने गया। संत

का कमरा एकदम सामान्य था। एक आसन और एक लालटेन के अलावा कमरे में और कुछ भी नहीं था।

मुसाफिर ने संत से से पूछा, "आपका माल-सामान कहाँ है?"

संत ने मुसाफिर से पूछा, "आपका कहाँ है?"

मुसाफिर ने जवाब दिया, "मेरा? लेकिन मैं तो मुसाफिर हूँ।

संत ने कहा, "मैं भी"

शुभेंदु ने हल्की मुस्कराहट के साथ आगे कहा, "इस मनुष्य जीवन की मुसाफिरी में मैं भी उस संत की तरह एक मुसाफिर ही हूँ। प्राप्त मनुष्य जीवन सार्थक करने के लिए मेरा ध्येय है कि अपने गुरुदेव से प्राप्त की हुई विद्या से मुक्ति और आनंद प्राप्त करूँ। न कि लोगों की देखादेखी करके माल-सामान इकट्ठा करूँ और समृद्ध बनूँ। मेरा आनंद ही मेरी समृद्धि है।"

"अरेरे, यह मैं किसके साथ कम्पैरिसन कर रहा था? जो सभी प्रतिस्पर्धाओं से परे हैं, खुद के आनंद में मस्त है, उनके साथ मैं स्पर्धा कर बैठा?"

शुभेंदु की बातें सुनकर बंसी की आँखें खुल गई, "इस स्पर्धा से मुझे क्या मिला? जलन के सिवाय कुछ भी नहीं। गुरुकुल में प्रवेश प्राप्त करके जो मुझे ज़बरदस्त सुख प्राप्त हुआ था, वह नासमझी से स्पर्धा करके खो दिया। कितनी भयंकर भूल कर दी।

शुभेंदु ने बंसी को झकझोरा, "किस सोच में पड़ गए, बंसी?"

"मुझे झकझोर कर जगाने के लिए धन्यवाद", बंसी ने शुभेंदु के सामने दोनों हाथ जोड़े। बंसी की आँखों की नमी देखकर, शुभेंदु ने बंसी को गले लगा लिया।

मन ही मन बंसी को लगा,
"अब पता चला कि गुरु जी के मन में आप क्यों बसे हुए हो।"
उस दिन स्पर्धा की जलन से मुक्ति हो गई।
बंसी ने हल्कापन महसूस किया
और अपनी मुक्ति और आनंद के मार्ग पर चल पड़ा।

आनंद में रहने का सीक्रेट

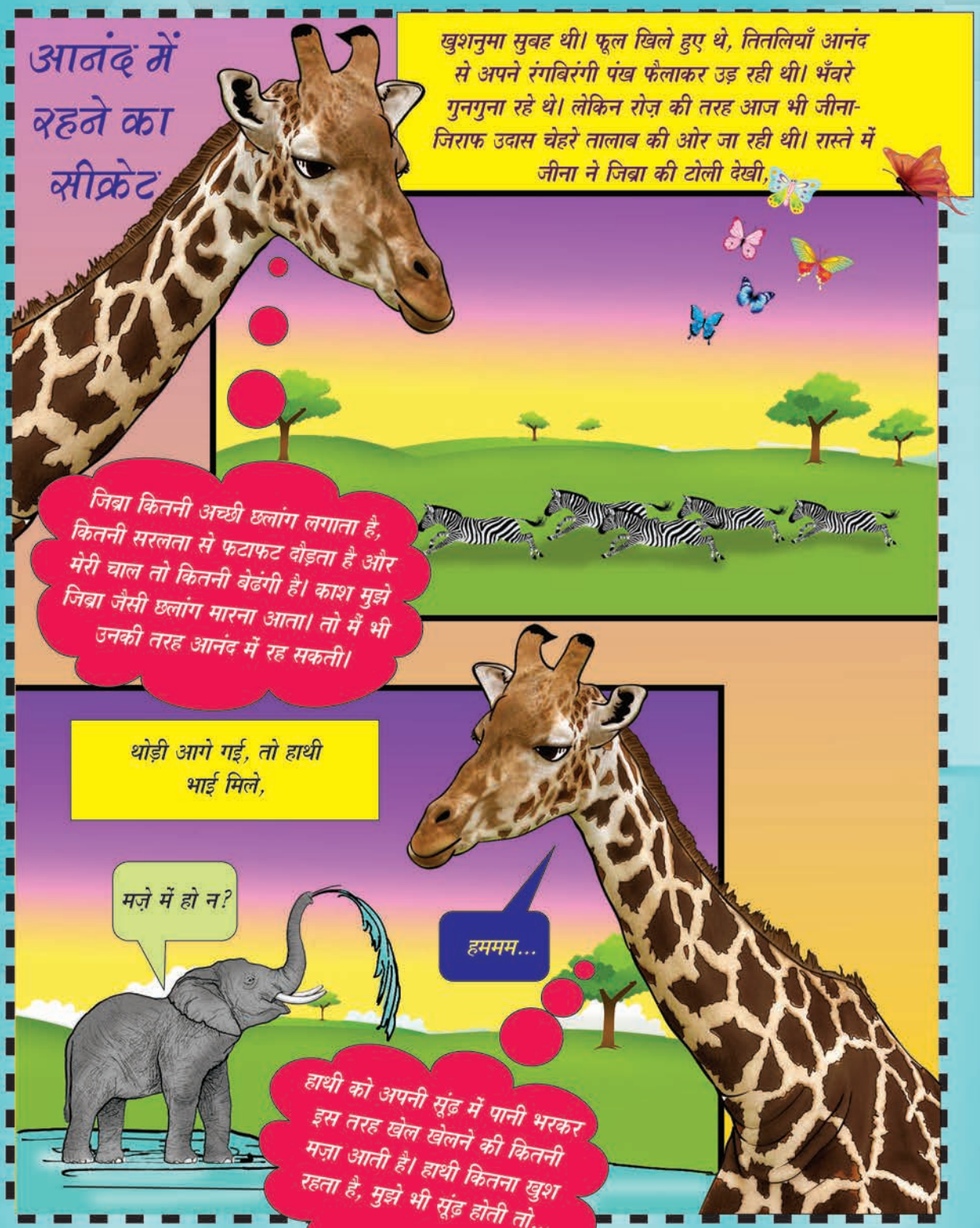

इस तरह सोच में डूबी हुई जीना ढिचुक-ढिचुक चल रही थी, तब उसे चिंकारा और हिरन दिखे,

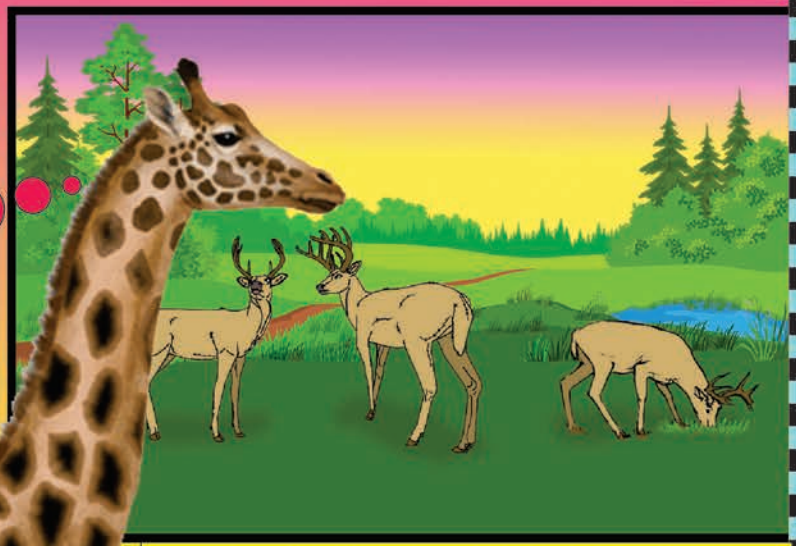

हिरन कितना सुंदर दिखता है, चिंकारा के सिंग कितने स्ट्रोंग हैं।

तभी आनंदी कौआ आकर जीना के सिर पर बैठ गया।

कांऊकांऊ... आनंद आनंद उभराय...

आनंदी कौए तुम इतने आनंद में कैसे रहते हो?

सिम्पल, मेरा मंत्र ही है। हमेशा आनंद में रहना। किसी भी संयोग में आनंद ढूँढ निकालना। लेकिन तुम्हारा चेहरा इतना उदास क्यों है?

तालाब के पास जाकर, जीना ने अपना प्रतिबिंब देखा,

जिब्रा, हिरन, चिंकारा सभी कितने अच्छे दिखते हैं और मैं कितनी विचित्र हूँ। मेरे पैर तो कैसे बांस जैसे हैं। और यह गर्दन तो खिंची हुई चिंगम जैसी है।

जीना, यह दुःख तो तुम्हारे कम्पैरिसन का है। तुम जिराफ हो तो जिराफ जैसी ही दिखोगी न? तुम्हारे पास क्या नहीं है, उसे देखने के बजाय तुम्हारे पास क्या है, इतना देखोगी, तो तुम्हारा दुःख गायब हो जाएगा।

लेकिन मेरे पास तो कुछ भी नहीं है। उन सभी के पास कितना सारा है।

लेकिन मेरे पास तो कुछ भी नहीं है। उन सभी के पास कितना सारा है।

जीना, हर एक के अंदर कुछ न कुछ विशिष्ट शक्तियाँ होती है। हमें अपनी शक्तियों को पहचानकर उन्हें बढ़ाना चाहिए। औरों के साथ कम्पैरिसन करके उनकी तरह बनने की कोशिश नहीं करनी है। मुझे बता, एक मछली पक्षियों के साथ कम्पैरिसन करे कि मैं उड़ नहीं सकती और दुःखी रहे तो?

जीना और आनंदी कौए की बातें चल रही थी तभी वहाँ एक सिंहनी आ गई। जीना एकदम घबरा गई।

घबरा मत। घबरा मत, जीना। प्लीज़ मेरी मदद कर। मेरा बच्चा पेड़ पर चढ़ गया है। उसे नीचे उतार देगी?

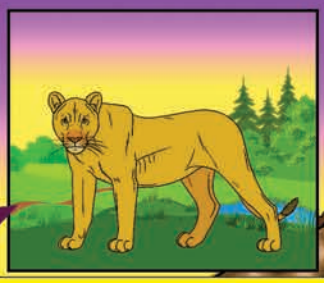

जीना ने एड़ी ऊँची करके, अपनी लंबी गर्दन खींचकर सिंह के बच्चे को सँभालकर नीचे उतार दिया।

शुक्रिया, शुक्रिया, शुक्रिया।

कांऊ.. कांऊ.. मदद करने की कैसी मज़ा, भाई कैसी मज़ा। मदद करने की मज़ा आई न जीना?

हाँ, बहुत मज़ा आई। आज पहली बार मुझे समझ में आया ये बाँस जैसे पैर और चिंगम जैसी गर्दन भी कितनी कीमती है। तुम सही कहते थे, मैं सिर्फ कम्पैरिसन करके दुःखी हो रही थी।

हाँ, कम्पैरिसन करके दुःखी होने से तो, अपने पास जो है उसका सदुपयोग करके उसमें खुश रहना चाहिए।

हाँ दोस्त, ज़रूर।

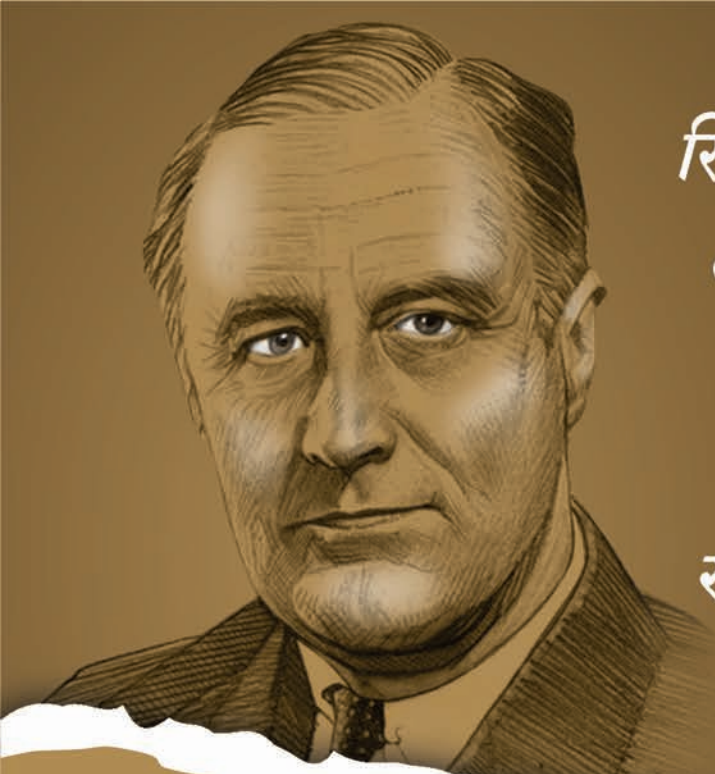

रियल लाइफ स्टॉरी

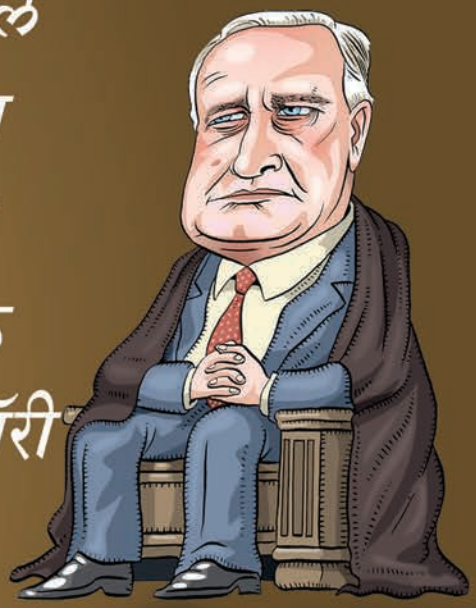

अमेरिका के इतिहास में **फ्रेंकलिन डीलानो** रुझवेल्ट एक ऐसे प्रेसिडेन्ट हो गए, जो लगातार चार टर्म, इ.स. १९३२ से १९४४ तक बहुमति से चुनकर आए थे। दो सौ साल के अमेरिका के इतिहास में ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। एक युवक को भी शरम आ जाए, ऐसी उनकी कार्य क्षमता थी। थकान को तो वे जानते ही नहीं थे।

लेकिन मित्रों, यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि ऐसी अद्भुत कार्य क्षमता रखने वाले प्रेसिडेन्ट व्हीलचेयर में थे। १९२१ में, ३८ साल की उम्र में वे पोलियो की भयंकर बीमारी से ग्रसित हो गए। उस बीमारी के कारण उनके दोनों पैर बेकार हो गए।

पोलियो होने से पहले रुझवेल्ट का बहुत अच्छा राजकीय कैरियर था। लोगों को लगा कि अब उनका भावी कैरियर खत्म हो जाएगा। अचानक आई हुई दारुण अपंग अवस्था रुझवेल्ट के लिए चुनौती थी। रुझवेल्ट ने उस चुनौती का हिम्मत से सामना किया।

उस समय उन्होंने जो खो दिया था उसके दुःख में डूबे न रहकर, जो बचा था उसकी शक्ति से उन्होंने दुगने जोश से फिर से राजनीति में कदम रखा। उनके प्रतिद्वन्दियों की शारीरिक क्षमता के साथ कम्पैरिसन करके दुःखी होने के बजाय, रुझवेल्ट ने अपंग अवस्था में चुनाव लड़ना शुरू किया। एक के बाद एक ऊँचा पद प्राप्त करके, वे प्रेसिडेन्ट के सर्वोच्च पद पर पहुँच गए।

रुझवेल्ट की विचक्षणता और दूरंगामी सोच से अमेरिका के इतिहास में उनका नाम अमर हो गया। जो देश १९३१-३२ की भयंकर मंदी, बेकारी और भुखमरी का शिकार बन गया था। वह देश रुझवेल्ट के शासन में, १९४४ तक विश्व का शक्तिशाली देश (सुपर पावर) बन गया।

और इस तरह अपनी अपंग अवस्था पर हिम्मत से विजय प्राप्त करके प्रेसिडेन्ट रुझवेल्ट अनेकों को प्रेरणा दे गए।

रास्ता ढूँढिए...

चलो खेलें...

१० अंतर ढूँढिए...

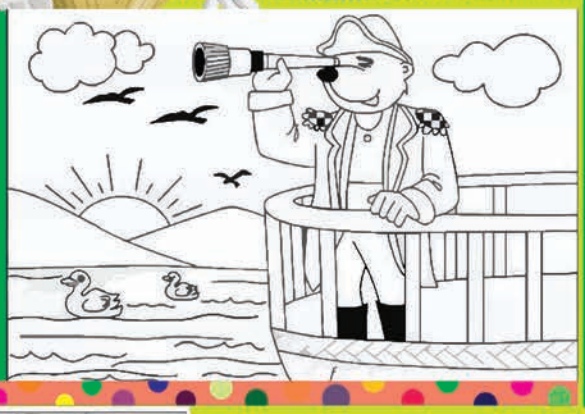

ऐतिहासिक गौरवगाथा

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में हस्तिशीर्ष नामक नगर था। उस नगर के लोग धर्म चिंतन करते थे।

श्री दमदंत हस्तिशीर्ष नगर के राजा थे। राजा के सूर्य समान प्रताप से दुर्जन खौफ में रहते और शीतल समान प्रताप से सज्जनों को आनंद प्राप्त होता था।

एक बार दमदंत राजा प्रतिवासुदेव जरासंघ की सेवा में उपस्थित रहने के लिए राजगृह नगर गए थे। उस समय मौका देखकर कौरवों के साथ पाँच पाँडवों ने दमदंत राजा का प्रदेश लुट लिया।

कुछ समय के बाद जब दमदंत राजा जरासंघ की अनुमति लेकर अपने नगर वापस लौटे तब लुटा हुआ, उजाड़, बिखरा हुआ, नगर देखकर उन्हें बहुत आघात लगा। आश्चर्य के साथ उन्होंने मंत्रियों से हकीकत पूछी। मंत्रियों ने कौरव-पांडवों के बारे में बताया।

यह सुनकर क्रोध में भरे हुए दमदंत ने सेना के साथ हस्तिनापुर की ओर कूच किया। चारों ओर से हस्तिनापुर को घेरकर विद्वान दूत को राजा युधिष्ठिर के पास भेजा।

दूत ने युधिष्ठिर की सभा में जाकर युधिष्ठिर से कहा - हमारे स्वामी दमदंत राजा ने आपसे कहलवाया है कि मेरी अनुपस्थिति में आपने मेरे राज्य पर आक्रमण करके मेरे राज्य में जो लूट-पाट की है, यह आपकी बहादुरी नहीं डकैती है। यह आपकी ताकत नहीं कपट है।

यदि आप अपने आपको बलवान और शूरवीर मानते हो तो नगर के बाहर आकर मेरे साथ युद्ध करो। मेरी तरफ से आपको भरोसा देता हूँ कि ऐसा युद्ध होगा कि अच्छे-अच्छे धराशायी हो जाएँगे, फिर भी मैं पीछे नहीं हटूँगा।

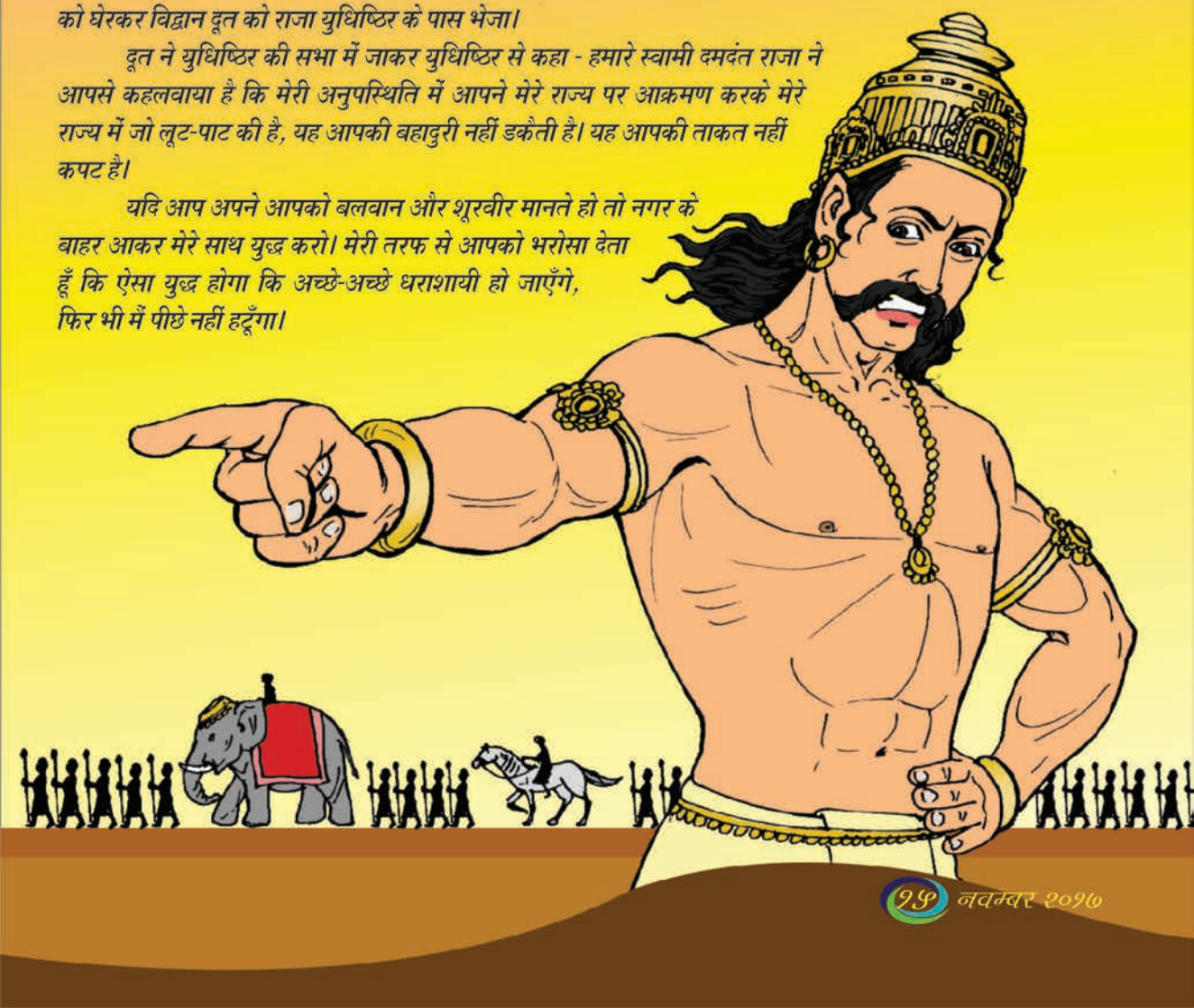

इस तरह कौरव-पांडव के नगर में उनकी ही सभा में दमदंत के दूत ने उनका तिरस्कार किया। फिर भी कौरव-पांडव युद्ध के लिए तैयार नहीं हुए और कायरों की तरह नगर में अंदर छुपकर बैठे रहे।

कायरों के साथ युद्ध की आशा रखना व्यर्थ है, ऐसा सोचकर दमदंत राजा ने नगर का घेरा हटा दिया और अपने नगर वापस लौट गए।

वापस लौटते समय दमदंत राजा ने सोचा, बाहर के शत्रुओं ने मेरे राज्य को लूट लिया तो मैं तुरंत उन्हें मारने के लिए तैयार हो गया। लेकिन क्रोध-मान-माया-लोभ रूपी अंतरशत्रु तो प्रतिक्षण मेरी क्षमा, सहजता, सरलता जैसे सद्‌गुणों को लूटते रहते हैं, फिर भी मैंने कभी उन्हें दूर करने का विचार भी नहीं किया। ये तो मेरा कितना बड़ा नुकसान कर रहे हैं। इस तरह सोचते-सोचते उन्हें वैराग्य भाव जागने लगा। राज्य की देखभाल करने में उनकी रूचि कम हो गई।

एक बार उनके राज्य में एक आचार्य भगवंत पधारे। उनकी वैराग्यभरी देशना सुनकर राजा दमदंत ने आचार्य भगवंत

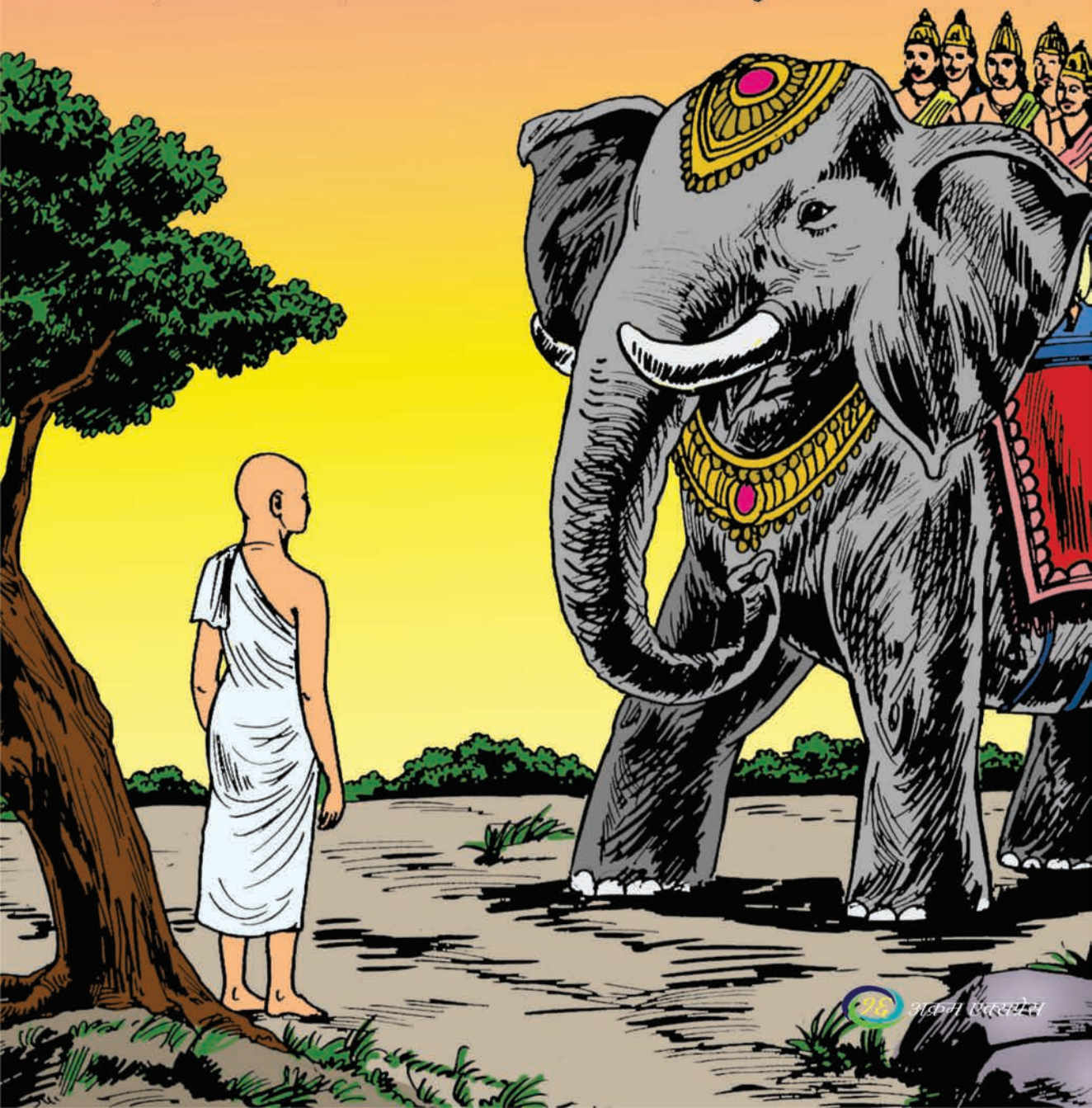

से दीक्षा ले ली। दमदंत मुनि दमदंत राजर्षि की तरह प्रसिद्ध हुए। वे शास्त्रों का गहन अध्ययन करने लगे। विहार करते-करते वे हस्तिनापुर नगर में पधारे।

इस तरफ पांडव श्रेष्ठ हाथी पर बैठकर घूमने निकले। नगर के बाहर निकलते ही उन्हें साधु के दर्शन हुए।

साधु के दर्शन से आनंद पाकर वे नज़दीक के दर्शन के लिए हाथी पर से नीचे उतरे और नज़दीक आते ही उन्हें पता चल गया कि ये तो राजा दमदंत हैं। उन्होंने बहुत ही अहोभाव के साथ उनको वंदन किया।

पांडवों में दूसरों के गुण देखने की योग्यता थी। इसीलिए दमदंत राजा के लिए हुए तिरस्कार को याद न करके उनकी शूरवीरता को याद किया और भक्ति भाव से बोले, "हे दमदंत राजर्षि! आपके जैसा महान और कौन होगा? पहले आपने अपनी शूरवीरता से बाहर के शत्रुओं पर विजय प्राप्त की। अब उसी शूरवीरता से क्रोध आदि आंतरिक शत्रुओं को जीत रहे हो। सचमुच आप धन्य हैं।"

इस तरह दमदंत मुनि की स्तुति करके खुद को धन्य मानकर वे आगे बढ़े।

कुछ देर बाद दुर्योधन भी अपने परिवार के साथ वहाँ आया। उसने भी दमदंत राजर्षि को ध्यान में खड़ा हुआ देखा।

दुर्योधन को उनके नगर को लूटने का अपना दोष नहीं दिखा। राजा दमदंत की बहादुरी नहीं दिखी। उनकी उग्र साधना नज़र में नहीं आई। लेकिन उनके दूत ने आकर जो तिरस्कार किया था, वह याद आया। पहले का बैर याद आ गया। अभी भी वे बैरी की तरह ही नज़र आए।

इसलिए उसने अपने हाथ के शस्त्र से मुनि के सिर पर प्रहार किया। उस समय दुर्योधन के साथ आने वाले परिवार के लोग तथा नौकरों ने भी अपने स्वामी के मनोभाव जानकर कंकड़-पत्थर आदि से मुनि पर प्रहार किया।

इस तरफ घूमकर वापस लौटते हुए पांडवों ने नगर में प्रवेश करने से पहले एकबार फिर से मुनि के दर्शन कर पावन होने के लिए वहाँ आए। लेकिन मुनि के बदले पत्थरों का ढेर देखकर, वहाँ के लोगों से पूछा, यहाँ जो राजर्षि थे वे कहाँ गए?

उन्होंने दुर्योधन ने जो चेष्टा की वह सब बताया - राजर्षि इस ढेर के बीच में होने चाहिए।

यह सुनकर अत्यंत दुःखी होकर पांडवों ने सभी पत्थर हटाए। "मुनि के शरीर को पत्थरों की मार से कितनी तीव्र पीड़ा हुई होगी" यह सोचकर मुनि के शरीर की पीड़ा दूर करने के लिए दुःखी पांडवों ने उनके शरीर की तेल से मालिश की और उन्हें पीड़ा से मुक्त किया।

दमदंत राजर्षि स्वयं इतनी ऊँची भूमिका पर विराजमान थे कि उनके मन में पीड़ा देने वाले दुर्योधन पर, "जो मेरा नहीं है उसे दुःख दे रहा है इसमें मेरा क्या" ऐसा सोचकर ज़रा भी रोष नहीं जागा और जब पांडवों ने शरीर की पूजा या इलाज किया तब "जो मेरा नहीं है उसकी पूजा-सत्कार में मेरा क्या।" ऐसा सोचकर ज़रा भी खुशी अनुभव नहीं की।

इस तरह राग-रोष से मुक्त वे मुनि भव्य जीवों को तारकर मोक्ष में गए। अतः वास्तव में राग-रोष से मुक्त होकर पवित्र होना ही श्रेष्ठ है।

मीठी यादें

एक महात्मा की मदर का कार एक्सिडेन्ट में मस्तिष्क डेमेज हो गया था। उन महात्मा की बहुत भावना थी कि दादाश्री उनकी माँ से मिलें और आशीर्वाद दें।

कुछ सालों के बाद संयोग मिला और दादाश्री उन महात्मा की मदर से मिलने गए।

महात्मा ने बताया कि सालों पहले कार एक्सिडेन्ट में फादर की मृत्यु हो गई और उसी एक्सिडेन्ट में मदर के ब्रेन में ऐसी चोट आ गई कि उनकी काफी कुछ स्मरण शक्ति चली गई। मदर कई बार यह भी भूल जाती हैं कि फादर की एक्सिडेन्ट में मृत्यु हो गई है।

महात्मा ने दादा से कहा, "दादा, इन्हें शरीर के दुःख से छुटकारा दिलवाइए।"

दादा ने महात्मा को आखें दिखाकर कहा, "क्या मृत्यु माँग रहे हो?"

महात्मा ने कुछ जवाब नहीं दिया।

दादा बोलें, "हम मोक्ष दाता हैं। हम मौत दाता नहीं हैं।"

फिर दादा ने कहा, "ये बहन तो कितने सुखी हैं। कितने पुण्यशाली हैं। आप इनका कितनी अच्छी तरह से ध्यान रख रहे हो कि इतने सालों के बाद भी उनकी स्किन इतनी फ्रेश दिख रही है। और सब से खास बात तो यह है कि इनकी ब्रेन इंजरी ऐसी है कि इन्हें दुःख नहीं रहता।"

यह सुनकर वे महात्मा एकदम स्वस्थ हो गए।

ज्ञानियों की कैसी ग़ज़ब की पॉज़िटिव दृष्टि होती है। जो गया उसे नहीं देखते। लेकिन जो बच गया है उसमें पॉज़िटिव ढूँढकर, सुखी रहने का उपाय बताते हैं।

LMHT FUSION
2017

Akram Express

November 2017
Year : 5, Issue : 8
Conti. Issue No.: 56

BALVIGNAN
Fun 'n' Gnan with Dada

Date of Publication On 8th Of Every Month
RNI No.GUJHIN/2013/53111
Postal Reg. No. G- GNR-306/17-19
valid up To 31-12-2019
Posted at Adalaj Post Office
on 08th of every month

वॉल पेन्टिंग

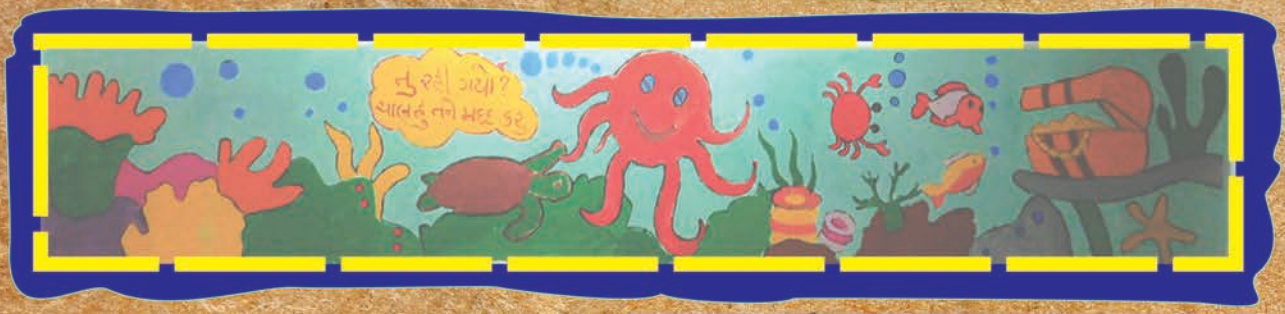

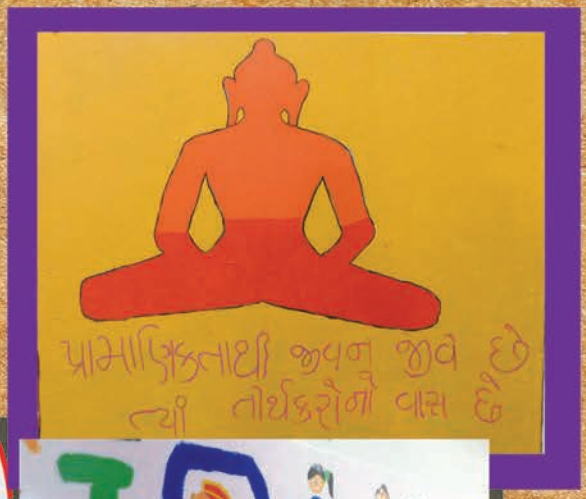

अक्रम एक्सप्रेस के सदस्यों के लिए सूचना

१. आपकी वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है उसका पता कैसे चलेगा? यदि आपकी इस महीने में आई हुई अक्रम एक्सप्रेस के कवर के लेबल पर लगे हुए मेम्बरशीप नं. के बाद **#** हो तो यह आपकी अंतिम अक्रम एक्सप्रेस है। उदा. **AGIA4313#** और यदि लेबल पर मेम्बरशीप नं. के बाद **##** हो तो अगले महीने में आपकी सदस्यता समाप्त होगी। उदा. **AGIA4313##** अक्रम एक्सप्रेस रिन्यूअल की जानकारी संपादकीय पेज पर दी गई है।

२. यदि किसी महीने का अक्रम एक्सप्रेस आपको नहीं मिला हो तो नीचे दी गई माहिती फोन नं. ८१५५००७५०० पर **SMS** करें।

१. कच्ची पावती नंबर या **ID No.**, २.पूरा ऐड्रेस पिन कोड के साथ, ३. जिस महीने का मैगज़ीन नहीं मिला हो, उस महीने का नाम।

Publisher, Printer & Editor - Mr. Dimplebhai Mehta on behaif of Mahavideh Foundation
Printed at **Amba offset** :- Parshwanath Chembers, Usmanpura, Ahmedabad - 14 and published